An Online Peer Reviewed Journal
www.thecommunicationsjournal.com

ISSN: 3139-3837 (Online)

THE COMMUNICATIONS JOURNAL

AN INTERNATIONAL JOURNAL OF MEDIA AND COMMUNICATIONS

A Monthly Journal of Media Research, Published in English and Hindi

Volume: 01, Issue: 02, Month: February, Year 2026

Email : editor@thecommunicationsjournal.com

मृत्यु-भोज का सांस्कृतिक एवं संरचनात्मक अध्ययन: परंपरा, सामाजिक दबाव और सेवा-आधारित वैकल्पिक मॉडल के परिप्रेक्ष्य में

लेखक: डॉ. अंकुर प्रकाश गुप्ता "मानव"
चार्टर्ड फेलो मेंबर
सेंट्रल क्रिश्चियन यूनिवर्सिटी (साउथ अफ्रीका)
ई-मेल: drankurprakashguptamanav@gmail.com
फ़ोन नंबर : 7017299630/8791536091/8282824022

सारांश

भारतीय समाज में मृत्यु को जीवन का स्वाभाविक सत्य माना जाता है। तेरहवीं का संस्कार शोक अवधि की समाप्ति और समाज में पुनः जुड़ने का प्रतीक है। पहले मृत्यु-भोज का उद्देश्य लोगों को एक साथ बैठाकर शोक संतप्त परिवार को सहारा देना और आपसी सहयोग की भावना को मजबूत करना था। समय के साथ, खासकर शहरी क्षेत्रों में, यह परंपरा कई जगह दिखावे और सामाजिक प्रतिष्ठा से जुड़ गई है। इसके कारण कई परिवारों पर आर्थिक बोझ बढ़ जाता है, विशेषकर निम्न आय वर्ग पर।

यह अध्ययन मृत्यु-भोज की पृष्ठभूमि, वर्तमान स्वरूप और उसके सामाजिक-आर्थिक प्रभावों को समझने का प्रयास करता है। शोध में पुस्तकों, लेखों, रिपोर्टों और कुछ उदाहरणों का सहारा लिया गया है। अध्ययन से पता चलता है कि अत्यधिक खर्च पर आधारित आयोजन कई बार परिवार को कर्ज की स्थिति में पहुँचा देते हैं। इसके स्थान पर रक्तदान, गरीब छात्रों की सहायता या वृक्षारोपण जैसे कार्य परंपरा की मूल भावना—सेवा और संवेदना—को अधिक सार्थक रूप में आगे बढ़ा सकते हैं।

परिचय

भारतीय समाज में जीवन और मृत्यु को केवल जैविक घटनाएँ नहीं, बल्कि सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक निरंतरता की प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। हिन्दू दर्शन के अनुसार आत्मा अविनाशी है तथा मृत्यु केवल शरीर का परिवर्तन है (भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 20–22)। इसी दार्शनिक आधार पर भारतीय समाज में विभिन्न मृत्यु-संस्कार विकसित हुए हैं, जिनका उद्देश्य मृतक के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने के साथ-साथ शोकाकुल परिवार को सामाजिक एवं भावनात्मक संबल प्रदान करना भी है। इन्हीं संस्कारों में तेरहवीं (तेरहवाँ संस्कार) का विशेष महत्व है, जिसे सामान्यतः शोक अवधि की समाप्ति तथा परिवार के पुनः सामाजिक जीवन में सक्रिय होने के प्रतीक के रूप में देखा जाता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से धार्मिक एवं सामूहिक अनुष्ठान सामाजिक एकता और सामूहिक चेतना को सुदृढ़ करते हैं। दुर्खीम (Durkheim, 1995) के अनुसार सामूहिक धार्मिक अनुष्ठान व्यक्तियों के बीच सामाजिक संबंधों को मजबूत करते हैं तथा समुदाय में सहभागिता की भावना विकसित करते हैं। इसी संदर्भ में पारंपरिक मृत्यु-भोज का उद्देश्य केवल भोजन कराना नहीं था, बल्कि शोकग्रस्त परिवार के साथ सामूहिक संवेदना व्यक्त करना, सामाजिक सहयोग को बढ़ावा देना तथा समुदाय के सदस्यों के बीच पारस्परिक विश्वास को सुदृढ़ करना था। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में सामूहिक पंगत, श्रमदान और सामुदायिक सहयोग जैसी व्यवस्थाएँ इस परंपरा की सामाजिक उपयोगिता को स्पष्ट करती रही हैं।

समय के साथ सामाजिक एवं आर्थिक संरचना में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। शहरीकरण, उपभोक्तावाद, आय स्तर में वृद्धि तथा सामाजिक प्रतिष्ठा की प्रतिस्पर्धा ने अनेक पारंपरिक धार्मिक आयोजनों की प्रकृति को प्रभावित किया है। वेबर (Weber, 1978) के अनुसार धार्मिक व्यवहार समाज की आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होते हैं। इसी प्रकार बुरदिये (Bourdieu, 1986) की 'प्रतीकात्मक पूंजी' (Symbolic Capital) की अवधारणा यह स्पष्ट करती है कि अनेक सामाजिक अवसर प्रतिष्ठा और सामाजिक पहचान के प्रदर्शन का माध्यम बन जाते हैं। परिणामस्वरूप अनेक स्थानों पर मृत्यु-भोज का स्वरूप भी सादगी से हटकर भव्य आयोजनों में परिवर्तित हुआ है, जहाँ महंगे पंडाल, कैटरिंग, सजावट तथा बड़ी अतिथि संख्या के कारण व्यय में उल्लेखनीय वृद्धि देखी जाती है।

विभिन्न सामाजिक अध्ययनों एवं समाचार-आधारित उदाहरणों से यह भी संकेत मिलता है कि सीमित आय वाले परिवार अनेक बार सामाजिक अपेक्षाओं के कारण अपनी आर्थिक क्षमता से अधिक व्यय करने के लिए बाध्य हो जाते हैं, जिससे ऋणग्रस्तता एवं आर्थिक अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। इसी प्रकार की चिंताओं को ध्यान में रखते हुए राजस्थान सरकार ने **Rajasthan Death Feast Prohibition Act, 1960** लागू किया, जिसका उद्देश्य मृत्यु-भोज में अनावश्यक एवं अत्यधिक खर्च पर नियंत्रण स्थापित करना था। यद्यपि इस कानून का प्रभाव विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग रहा, तथापि यह इस विषय की सामाजिक एवं नीतिगत महत्ता को रेखांकित करता है।

उपलब्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि धार्मिक अनुष्ठानों, सामाजिक एकता तथा सांस्कृतिक परंपराओं पर पर्याप्त शोध उपलब्ध हैं, किन्तु मृत्यु-भोज के बदलते सांस्कृतिक स्वरूप, उसके सामाजिक-आर्थिक प्रभाव तथा सेवा-आधारित वैकल्पिक मॉडल का समग्र विश्लेषण अपेक्षाकृत सीमित है। अधिकांश अध्ययन या तो धार्मिक दृष्टिकोण तक सीमित हैं अथवा इसे केवल एक सामाजिक कुरीति के रूप में देखते हैं। यही इस अध्ययन का प्रमुख शोध-अंतर (Research Gap) है।

हाल के वर्षों में देश के विभिन्न क्षेत्रों में कुछ परिवारों एवं सामाजिक संगठनों द्वारा तेरहवीं के अवसर पर रक्तदान शिविर, वृक्षारोपण, निर्धन विद्यार्थियों को शैक्षिक सहायता, भोजन वितरण तथा अन्य समाजोपयोगी कार्यक्रम आयोजित किए जाने के उदाहरण सामने आए हैं। National Blood Transfusion Council (2023) के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष लगभग 1.5 करोड़ यूनिट रक्त की आवश्यकता होती है, जिससे स्पष्ट होता है कि ऐसे सेवा-आधारित प्रयास सामाजिक दृष्टि से अत्यंत उपयोगी हो सकते हैं। इस प्रकार की पहलें यह संकेत देती हैं कि परंपरा की मूल भावना—संवेदना, सहयोग और सामाजिक उत्तरदायित्व—को बनाए रखते हुए उसे वर्तमान सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप अधिक उपयोगी स्वरूप प्रदान किया जा सकता है।

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य मृत्यु-भोज की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, उसके बदलते सामाजिक एवं आर्थिक स्वरूप तथा सेवा-आधारित वैकल्पिक मॉडल की संभावनाओं का विश्लेषण करना है। साथ ही यह अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि किस प्रकार परंपरा की मूल भावना को सुरक्षित रखते हुए अनावश्यक आर्थिक बोझ को कम किया जा सकता है तथा मृत्यु-भोज को सामाजिक सहयोग, मानवीय संवेदना और जनकल्याण से जोड़कर अधिक सार्थक बनाया जा सकता है।

साहित्य समीक्षा

धार्मिक अनुष्ठानों और समाज के संबंध को समझने के लिए कई समाजशास्त्रियों ने अपने-अपने विचार दिए हैं। इन विचारों के आधार पर मृत्यु-भोज जैसी परंपराओं को समझना आसान हो जाता है। सबसे पहले फ्रांसीसी समाजशास्त्री Émile Durkheim का उल्लेख करना आवश्यक है। उन्होंने सामूहिक चेतना (Collective Conscience) की अवधारणा प्रस्तुत की। अपनी पुस्तक The Elementary Forms of Religious Life में उन्होंने बताया कि जब लोग किसी धार्मिक अनुष्ठान में एक साथ भाग लेते हैं, तो उनके बीच एक गहरा सामाजिक संबंध बनता है। ऐसे अनुष्ठान समाज में एकता और सामूहिक भावना को मजबूत करते हैं। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो मृत्यु-भोज केवल एक रस्म नहीं है, बल्कि यह समाज के लोगों को एकत्र कर शोकग्रस्त परिवार के साथ खड़े होने का अवसर देता है। इससे सामाजिक जुड़ाव बढ़ता है और परिवार को मानसिक सहारा मिलता है।

जर्मन समाजशास्त्री Max Weber ने धर्म और समाज के संबंध को आर्थिक और सामाजिक संरचना के संदर्भ में समझाया। उनके अनुसार धार्मिक व्यवहार समाज की परिस्थितियों से प्रभावित होते हैं। जब समाज में आर्थिक असमानता, प्रतिष्ठा की भावना और प्रतिस्पर्धा बढ़ती है, तो धार्मिक आयोजन भी उससे अछूते नहीं रहते। मृत्यु-भोज के बदलते स्वरूप को इसी दृष्टि से समझा जा सकता है। पहले यह सादगी और सामूहिक सहयोग का प्रतीक था, लेकिन आज कई स्थानों पर यह सामाजिक प्रतिष्ठा से जुड़ गया है। बड़े स्तर पर आयोजन करना कई बार सम्मान और पहचान से जोड़कर देखा जाता है।

फ्रांसीसी चिंतक Pierre Bourdieu ने "प्रतीकात्मक पूंजी" (Symbolic Capital) की अवधारणा दी। उनके अनुसार समाज में कुछ व्यवहार और परंपराएँ व्यक्ति या परिवार को सामाजिक मान-सम्मान दिलाने का साधन बन सकती हैं। आधुनिक समय में मृत्यु-भोज की भव्यता को इस विचार से जोड़ा जा सकता है। कई बार परिवार यह सोचकर अधिक खर्च करता है कि इससे उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा बनी रहेगी या बढ़ेगी। इस प्रकार धार्मिक परंपरा और सामाजिक सम्मान एक-दूसरे से जुड़ जाते हैं।

भारतीय संदर्भ में भी इस विषय पर चर्चा होती रही है। कई सामाजिक सुधार आंदोलनों ने मृत्यु-भोज को एक ऐसी परंपरा माना है, जो कभी-कभी आर्थिक बोझ बन जाती है। विशेषकर निम्न आय वर्ग के परिवार सामाजिक दबाव के कारण अपनी क्षमता से अधिक खर्च कर देते हैं। इसी समस्या को ध्यान में रखते हुए Rajasthan Death Feast Prohibition Act, 1960 बनाया गया। इसका उद्देश्य मृत्यु-भोज में अनावश्यक और अत्यधिक खर्च को रोकना था। हालांकि इस कानून का प्रभाव हर जगह समान नहीं रहा, फिर भी यह दर्शाता है कि समाज में इस विषय को गंभीरता से लिया गया है।

वर्तमान समय में स्वास्थ्य और सामाजिक सेवा से जुड़े विचार भी इस परंपरा को नए रूप में देखने का अवसर देते हैं। National Blood Transfusion Council (2023) की रिपोर्ट के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष लगभग 1.5 करोड़ यूनिट रक्त की आवश्यकता होती है। यह आँकड़ा बताता है कि समाज में रक्तदान की बड़ी जरूरत है। यदि तेरहवीं जैसे अवसरों पर रक्तदान शिविर आयोजित किए जाएँ, तो यह परंपरा समाज के लिए उपयोगी दिशा में बदल सकती है। कुछ स्थानों पर परिवारों ने मृत्यु-भोज के स्थान पर या उसके साथ छात्रवृत्ति वितरण, भोजन वितरण या वृक्षारोपण जैसे कार्य भी शुरू किए हैं।

उपलब्ध साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि धार्मिक अनुष्ठानों, सामाजिक एकता और आर्थिक व्यय पर काफी अध्ययन मौजूद हैं, लेकिन मृत्यु-भोज के सांस्कृतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर संयुक्त रूप से कम शोध हुआ है। अधिकतर अध्ययन या तो धार्मिक दृष्टि से विषय को देखते हैं या आर्थिक कुरीति के रूप में। समग्र दृष्टिकोण से अध्ययन की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है। यही कारण है कि मृत्यु-भोज के विषय पर संतुलित और सरल विश्लेषण प्रस्तुत करना महत्वपूर्ण है, ताकि इसकी मूल भावना को समझा जा सके और आधुनिक समाज के अनुरूप सकारात्मक दिशा दी जा सके।

अध्ययन के उद्देश्य

इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य मृत्यु-भोज की परंपरा को समग्र रूप में समझना है। इसके अंतर्गत सबसे पहले इसकी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया जाएगा, ताकि यह स्पष्ट हो सके कि यह परंपरा किन मूल भावनाओं और सामाजिक परिस्थितियों से जुड़ी रही है। दूसरा, वर्तमान सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों के संदर्भ में इसके स्वरूप में आए बदलावों का परीक्षण किया जाएगा। तीसरा, मृत्यु-भोज के आर्थिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक प्रभावों का मूल्यांकन किया जाएगा, विशेष रूप से विभिन्न आय वर्गों पर इसके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए। चौथा, सेवा-आधारित श्रद्धांजलि मॉडल की व्यवहार्यता और सामाजिक स्वीकृति का अध्ययन किया जाएगा। अंततः संतुलित सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए व्यावहारिक और नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना भी इस शोध का उद्देश्य है।

सैद्धांतिक / वैचारिक रूपरेखा

इस अध्ययन की सैद्धांतिक रूपरेखा समाजशास्त्र और सामाजिक परिवर्तन से जुड़े कुछ मूल विचारों पर आधारित है। इन विचारों की मदद से मृत्यु-भोज की परंपरा को केवल एक धार्मिक रस्म के रूप में नहीं, बल्कि एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में समझने का प्रयास किया गया है।

सबसे पहले सामाजिक एकता और सामूहिकता की अवधारणा को आधार बनाया गया है। इस दृष्टिकोण के अनुसार जब लोग किसी धार्मिक या पारिवारिक अवसर पर एक साथ एकत्र होते हैं, तो उनके बीच संबंध मजबूत होते हैं। वे एक-दूसरे के सुख-दुख में भागीदार बनते हैं। मृत्यु-भोज भी इसी प्रकार का अवसर है, जहाँ समाज के लोग शोकग्रस्त परिवार के साथ खड़े होते हैं। इस प्रकार यह परंपरा सामाजिक सहयोग और भावनात्मक सहारे का माध्यम बन सकती है।

दूसरा महत्वपूर्ण आधार धर्म और सामाजिक संरचना के संबंध से जुड़ा है। समाज की आर्थिक स्थिति, सामाजिक प्रतिष्ठा और प्रतिस्पर्धा धार्मिक आयोजनों के स्वरूप को प्रभावित करती है। जब समाज में

दिखावे और मान-सम्मान की भावना बढ़ती है, तो परंपराएँ भी उसी दिशा में बदलने लगती हैं। मृत्यु-भोज के आधुनिक स्वरूप में बढ़ता हुआ खर्च और भव्य आयोजन इसी सामाजिक परिवर्तन का परिणाम माने जा सकते हैं।

तीसरा आधार सांस्कृतिक व्यवहार और सामाजिक सम्मान के संबंध को समझने से जुड़ा है। कई बार परिवार यह सोचकर अधिक खर्च करते हैं कि इससे उनकी प्रतिष्ठा बनी रहेगी। इस प्रकार धार्मिक आयोजन सामाजिक पहचान का साधन बन जाते हैं। यह विचार मृत्यु-भोज के आर्थिक और सांस्कृतिक प्रभावों को समझने में सहायक है।

इसके साथ ही सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा भी इस अध्ययन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। समाज स्थिर नहीं रहता, इसलिए परंपराएँ भी समय के साथ बदलती हैं। सेवा-आधारित श्रद्धांजलि जैसे नए प्रयास इसी परिवर्तन का उदाहरण हैं।

इस प्रकार यह सैद्धांतिक रूपरेखा अध्ययन के उद्देश्यों से सीधे जुड़ी है और मृत्यु-भोज की परंपरा को ऐतिहासिक, सामाजिक और आधुनिक संदर्भ में समझने में मार्गदर्शन प्रदान करती है।

शोध कार्यप्रणाली

प्रस्तुत अध्ययन **वर्णनात्मक** एवं **विश्लेषणात्मक** शोध पद्धति पर आधारित है। अध्ययन का उद्देश्य मृत्यु-भोज की परंपरा के ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक स्वरूप का समग्र विश्लेषण करना तथा बदलते सामाजिक परिवेश में इसके प्रभावों एवं वैकल्पिक संभावनाओं का मूल्यांकन करना है। वर्णनात्मक पद्धति के माध्यम से मृत्यु-भोज की उत्पत्ति, सांस्कृतिक महत्ता, धार्मिक आधार तथा वर्तमान स्वरूप का व्यवस्थित विवरण प्रस्तुत किया गया है, जबकि विश्लेषणात्मक पद्धति के माध्यम से इस परंपरा से जुड़े सामाजिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक पक्षों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य केवल परंपरा का विवरण प्रस्तुत करना नहीं, बल्कि उपलब्ध तथ्यों, शोध अध्ययनों तथा प्रलेखित उदाहरणों के आधार पर संतुलित एवं प्रमाण-आधारित निष्कर्ष प्रस्तुत करना है।

इस शोध में मुख्य रूप से **गुणात्मक** दृष्टिकोण अपनाया गया है। चूँकि अध्ययन का विषय सामाजिक एवं सांस्कृतिक व्यवहार से संबंधित है, इसलिए इसके विभिन्न आयामों को समझने के लिए द्वितीयक स्रोतों का गहन विश्लेषण किया गया। अध्ययन के लिए समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, भारतीय संस्कृति, धार्मिक परंपराओं एवं सामाजिक परिवर्तन से संबंधित पुस्तकों, शोध-पत्रों, समीक्षित जर्नल लेखों, सरकारी रिपोर्टों, विधिक दस्तावेजों, समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं तथा प्रकाशित केस-स्टडी का उपयोग किया गया। इसके अतिरिक्त मृत्यु-भोज की परंपरा, सामाजिक सुधार अभियानों तथा वैकल्पिक सामाजिक पहलों से संबंधित विश्वसनीय डिजिटल स्रोतों एवं संस्थागत प्रकाशनों का भी संदर्भ लिया गया। जहाँ आवश्यक था, वहाँ सरकारी आँकड़ों एवं आधिकारिक रिपोर्टों के माध्यम से तथ्यों का सत्यापन किया गया, जिससे अध्ययन की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता सुनिश्चित की जा सके।

अध्ययन में **उद्देश्यपूर्ण नमूना चयन** पद्धति का प्रयोग किया गया। इस पद्धति का चयन इसलिए किया गया क्योंकि शोध का उद्देश्य सम्पूर्ण भारत का सांख्यिकीय सर्वेक्षण प्रस्तुत करना नहीं, बल्कि उन क्षेत्रों का

अध्ययन करना था जहाँ मृत्यु-भोज की परंपरा स्पष्ट रूप से प्रचलित है अथवा जहाँ इसके स्वरूप में उल्लेखनीय सामाजिक परिवर्तन देखने को मिले हैं। इसी आधार पर ऐसे स्थानों का चयन किया गया जहाँ से पर्याप्त प्रलेखित सामग्री, समाचार, सामाजिक अध्ययन अथवा केस-स्टडी उपलब्ध थीं।

नमूना चयन के अंतर्गत **उत्तर प्रदेश** के **मुजफ्फरनगर (विशेष रूप से खतौली क्षेत्र), सहारनपुर (गंगोह) तथा बुलंदशहर**, **राजस्थान** के **नागौर, जयपुर, अजमेर एवं राजगढ़** तथा **बिहार** के **खगड़िया** जिले से संबंधित प्रकाशित समाचार, सामाजिक अध्ययन, शोध सामग्री एवं प्रलेखित उदाहरणों का विश्लेषण किया गया। इन क्षेत्रों का चयन किसी संयोगवश नहीं किया गया, बल्कि इसलिए किया गया क्योंकि इन स्थानों पर मृत्यु-भोज की परंपरा, उससे जुड़े सामाजिक व्यवहार, आर्थिक प्रभाव, सामाजिक सुधार प्रयास तथा वैकल्पिक सेवा-आधारित आयोजनों के पर्याप्त दस्तावेज उपलब्ध हैं। विशेष रूप से राजस्थान में मृत्यु-भोज की परंपरा एवं उस पर नियंत्रण के उद्देश्य से लागू **Rajasthan Death Feast Prohibition Act, 1960** इस अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण संदर्भ प्रदान करता है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश एवं बिहार के चयनित क्षेत्रों से प्राप्त समाचार एवं सामाजिक उदाहरण मृत्यु-भोज के समकालीन स्वरूप तथा उसमें हो रहे परिवर्तनों को समझने में सहायक सिद्ध हुए।

अध्ययन के दौरान विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त सामग्री का **तुलनात्मक विश्लेषण** किया गया, जिससे यह समझा जा सके कि ग्रामीण एवं अर्ध-शहरी समाजों में मृत्यु-भोज की परंपरा किस प्रकार भिन्न-भिन्न स्वरूपों में प्रचलित है तथा आधुनिक सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों ने इस पर किस प्रकार प्रभाव डाला है। इसके साथ ही **विषय-वस्तु विश्लेषण** तकनीक का उपयोग करते हुए पुस्तकों, शोध-पत्रों, सरकारी दस्तावेजों, समाचार रिपोर्टों तथा केस-स्टडी में उपलब्ध सामग्री को प्रमुख विषयों—जैसे सामाजिक सहयोग, आर्थिक प्रभाव, सांस्कृतिक परिवर्तन, सामाजिक प्रतिष्ठा, धार्मिक मान्यताएँ एवं वैकल्पिक सामाजिक पहल—के आधार पर वर्गीकृत कर उनका विश्लेषण किया गया। इस प्रक्रिया से विभिन्न स्रोतों के बीच समानताओं एवं भिन्नताओं की पहचान करने तथा निष्कर्षों की विश्वसनीयता बढ़ाने में सहायता मिली।

अध्ययन में जहाँ भी सांख्यिकीय आँकड़ों का उपयोग किया गया है, उनका उद्देश्य मात्र संख्यात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना नहीं, बल्कि शोध निष्कर्षों को तथ्यात्मक आधार प्रदान करना है। इसलिए आँकड़ों का उपयोग व्याख्यात्मक एवं पुष्टिकरण दृष्टिकोण से किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष किसी एक क्षेत्र विशेष तक सीमित न होकर विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों की तुलनात्मक समझ विकसित करने का प्रयास करते हैं।

चूँकि यह शोध पूर्णतः **द्वितीयक स्रोतों** पर आधारित गुणात्मक अध्ययन है, इसलिए चयनित नमूनों का उद्देश्य सांख्यिकीय प्रतिनिधित्व (Statistical Representation) स्थापित करना नहीं, बल्कि मृत्यु-भोज की परंपरा के विविध सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक आयामों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करना है। उद्देश्यपूर्ण नमूना चयन, प्रलेखित केस-स्टडी, प्रकाशित समाचारों तथा पूर्ववर्ती शोध अध्ययनों के तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से यह प्रयास किया गया है कि अध्ययन निष्पक्ष, प्रमाण-आधारित एवं अकादमिक दृष्टि से विश्वसनीय हो। इस प्रकार अपनाई गई शोध कार्यप्रणाली अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप है तथा मृत्यु-भोज की परंपरा के बदलते स्वरूप, उसके सामाजिक प्रभावों एवं संभावित वैकल्पिक मॉडलों को वैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टिकोण से समझने के लिए उपयुक्त आधार प्रदान करती है।

डेटा विश्लेषण एवं निष्कर्ष

इस अध्ययन में मृत्यु-भोज की परंपरा का विश्लेषण द्वितीयक स्रोतों, प्रकाशित शोध-पत्रों, समाजशास्त्रीय साहित्य, सरकारी दस्तावेजों, समाचार रिपोर्टों तथा चयनित क्षेत्रों से संबंधित प्रलेखित केस-स्टडी के आधार पर किया गया है। विश्लेषण के लिए उत्तर प्रदेश (मुजफ्फरनगर, सहारनपुर एवं बुलंदशहर), राजस्थान (नागौर, जयपुर, अजमेर एवं राजगढ़) तथा बिहार (खगड़िया) से प्राप्त प्रकाशित उदाहरणों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। इन क्षेत्रों का चयन इसलिए किया गया क्योंकि यहाँ मृत्यु-भोज की परंपरा, उससे जुड़े सामाजिक व्यवहार तथा सुधारात्मक प्रयासों के पर्याप्त प्रलेखित उदाहरण उपलब्ध हैं। निष्कर्षों को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक आयामों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

आर्थिक विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि मृत्यु-भोज पर होने वाला व्यय परिवार की आर्थिक स्थिति, सामाजिक प्रतिष्ठा, अतिथियों की संख्या तथा स्थानीय परंपराओं के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। अध्ययन में सम्मिलित समाचार रिपोर्टों, प्रकाशित केस-स्टडी तथा क्षेत्रीय उदाहरणों से संकेत मिलता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में सामान्यतः मृत्यु-भोज का व्यय लगभग **₹50,000 से ₹5,00,000** तक पाया गया, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह व्यय **₹2,00,000 से ₹15,00,000** या इससे अधिक तक पहुँच सकता है। यह कोई आधिकारिक राष्ट्रीय औसत नहीं है, बल्कि अध्ययन में विश्लेषित प्रलेखित उदाहरणों पर आधारित अनुमानित व्यय सीमा है। व्यय में यह अंतर मुख्यतः आयोजन के स्वरूप, सामाजिक अपेक्षाओं, कैटरिंग, सजावट, अतिथियों की संख्या तथा स्थानीय आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

समाजशास्त्री पियरे बुरदिये (Bourdieu, 1986) के अनुसार सामाजिक प्रतिष्ठा (Symbolic Capital) अनेक अवसरों पर आर्थिक व्यवहार को प्रभावित करती है। अध्ययन के दौरान विश्लेषित अनेक उदाहरणों से यह संकेत मिला कि कुछ परिवार सामाजिक सम्मान एवं प्रतिष्ठा बनाए रखने के उद्देश्य से अपनी आर्थिक क्षमता से अधिक व्यय करते हैं। विशेष रूप से निम्न एवं मध्यम आय वर्ग के परिवारों में सामाजिक अपेक्षाओं के कारण अतिरिक्त आर्थिक दबाव उत्पन्न होने की संभावना अधिक देखी गई। विभिन्न समाचार रिपोर्टों में ऐसे उदाहरण भी प्राप्त हुए जहाँ परिवारों ने सामाजिक परंपरा निभाने के लिए उधार लिया अथवा अपनी बचत का उपयोग किया। यद्यपि इस अध्ययन में ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या का प्रत्यक्ष सर्वेक्षण नहीं किया गया, तथापि उपलब्ध साहित्य एवं प्रलेखित उदाहरण यह संकेत देते हैं कि अत्यधिक व्यय आर्थिक अस्थिरता का कारण बन सकता है।

क्षेत्रीय तुलना से यह भी स्पष्ट हुआ कि जहाँ स्थानीय समुदाय, ग्राम पंचायतों अथवा सामाजिक संगठनों ने सामूहिक स्तर पर सादगीपूर्ण मृत्यु-भोज को प्रोत्साहित किया, वहाँ अनावश्यक खर्च में कमी देखी गई। राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में मृत्यु-भोज पर नियंत्रण हेतु बनाए गए **Rajasthan Death Feast Prohibition Act, 1960** तथा विभिन्न ग्राम पंचायतों द्वारा पारित सामाजिक संकल्प इस दिशा में उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में सीमित अतिथि संख्या, सामूहिक सहयोग तथा सादगीपूर्ण आयोजन की प्रवृत्ति भी देखने को मिली। इससे यह स्पष्ट होता है कि यदि सामाजिक स्तर पर सामूहिक सहमति विकसित की जाए तो आर्थिक बोझ को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

अध्ययन के दौरान मृत्यु-भोज के वैकल्पिक सामाजिक स्वरूपों का भी विश्लेषण किया गया। उत्तर प्रदेश, राजस्थान एवं अन्य राज्यों से प्रकाशित समाचारों में ऐसे अनेक उदाहरण प्राप्त हुए जिनमें परिवारों ने पारंपरिक भोज के स्थान पर या उसके साथ **स्वैच्छिक रक्तदान शिविर, वृक्षारोपण, निर्धन विद्यार्थियों को शैक्षिक सहायता, गरीबों को भोजन वितरण तथा सामाजिक सेवा कार्यक्रमों** का आयोजन किया। National Blood Transfusion Council (NBTC, 2023) के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष लगभग **1.5 करोड़ यूनिट रक्त** की आवश्यकता होती है। इस संदर्भ में मृत्यु-भोज के अवसर पर आयोजित रक्तदान शिविर न

केवल मृतक की स्मृति को समाजोपयोगी स्वरूप प्रदान करते हैं, बल्कि सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था को भी प्रत्यक्ष सहयोग देते हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परंपरा की मूल भावना को बनाए रखते हुए उसे सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा जा सकता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि मृत्यु-भोज का एक महत्वपूर्ण सकारात्मक पक्ष सामाजिक एवं भावनात्मक सहयोग है। दुर्खीम (Durkheim, 1995) के अनुसार सामूहिक धार्मिक एवं सामाजिक अनुष्ठान सामाजिक एकजुटता (Social Solidarity) को सुदृढ़ करते हैं। अध्ययन में सम्मिलित साहित्य एवं केस-स्टडी से यह स्पष्ट हुआ कि शोकग्रस्त परिवार के साथ रिश्तेदारों, पड़ोसियों एवं समुदाय की उपस्थिति उन्हें भावनात्मक संबल प्रदान करती है। सामूहिक सहभागिता से अकेलेपन की भावना कम होती है तथा सामाजिक सहयोग की भावना विकसित होती है। इसलिए मृत्यु-भोज का मूल उद्देश्य केवल भोजन कराना नहीं, बल्कि शोक की घड़ी में सामुदायिक सहभागिता सुनिश्चित करना है।

इसके विपरीत अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ कि जब मृत्यु-भोज सामाजिक प्रतिष्ठा, प्रतिस्पर्धा अथवा दिखावे का माध्यम बन जाता है, तब उसका सकारात्मक उद्देश्य प्रभावित होने लगता है। विशेष रूप से सीमित आय वाले परिवारों में अत्यधिक खर्च की चिंता मानसिक तनाव, असुरक्षा एवं सामाजिक दबाव को बढ़ा सकती है। समाजशास्त्रीय साहित्य भी यह स्वीकार करता है कि सामाजिक अपेक्षाएँ अनेक बार व्यक्तियों के आर्थिक निर्णयों को प्रभावित करती हैं। इसलिए यदि परंपरा का मूल उद्देश्य शोकग्रस्त परिवार को सहयोग देना है, तो उसे ऐसे स्वरूप में निभाया जाना चाहिए जिससे परिवार पर अतिरिक्त आर्थिक अथवा मानसिक दबाव उत्पन्न न हो।

सांस्कृतिक विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि मृत्यु-भोज का स्वरूप सम्पूर्ण भारत में एक समान नहीं है। यह स्थानीय संस्कृति, आर्थिक स्थिति, धार्मिक मान्यताओं, शिक्षा, शहरीकरण तथा सामाजिक सोच के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक सहयोग एवं सादगी की परंपरा अपेक्षाकृत अधिक दिखाई देती है, जबकि अनेक शहरी क्षेत्रों में आधुनिक जीवन-शैली, उपभोक्तावाद तथा सामाजिक प्रतिस्पर्धा का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। मैक्स वेबर (Weber, 1978) के अनुसार सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन धार्मिक व्यवहारों एवं सांस्कृतिक परंपराओं को भी प्रभावित करते हैं, जो इस अध्ययन के निष्कर्षों से भी मेल खाता है।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मृत्यु-भोज की परंपरा न तो पूर्णतः सामाजिक समस्या है और न ही केवल धार्मिक अनुष्ठान; बल्कि यह एक बहुआयामी सामाजिक-सांस्कृतिक संस्था है, जिसका स्वरूप समय, स्थान एवं सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है। अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि यदि इस परंपरा को उसकी मूल भावना—सामाजिक सहयोग, मानवीय संवेदना एवं सामुदायिक सहभागिता—के अनुरूप निभाया जाए तथा अनावश्यक व्यय को सीमित किया जाए, तो यह समाज के लिए सकारात्मक भूमिका निभा सकती है। साथ ही, सेवा-आधारित मॉडल, जैसे रक्तदान, वृक्षारोपण, शैक्षिक सहायता एवं अन्य जनकल्याणकारी गतिविधियाँ, परंपरा को अधिक प्रासंगिक, मानवीय एवं सामाजिक रूप से उपयोगी बना सकती हैं। यही इस अध्ययन का प्रमुख निष्कर्ष है, जो शोध के उद्देश्यों एवं उपलब्ध साक्ष्यों के अनुरूप प्रस्तुत किया गया है।

चर्चा

इस अध्ययन से जो निष्कर्ष सामने आए हैं, वे यह बताते हैं कि मृत्यु-भोज की परंपरा केवल एक धार्मिक क्रिया नहीं है, बल्कि यह समाज की बदलती सोच और परिस्थितियों को भी दर्शाती है। समय के साथ इसका स्वरूप बदलता रहा है। पहले इसका मुख्य उद्देश्य शोकग्रस्त परिवार को सहारा देना, सामाजिक सहयोग को मजबूत करना और सामूहिक रूप से दुख साझा करना था। आज भी यह उद्देश्य कई स्थानों पर मौजूद है, लेकिन इसके साथ-साथ दिखावा, प्रतिष्ठा और सामाजिक तुलना जैसे तत्व भी जुड़ते जा रहे हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखें तो Émile Durkheim के विचार यहाँ उपयोगी लगते हैं। दुर्खीम का मानना था कि सामूहिक अनुष्ठान समाज को जोड़ते हैं और लोगों के बीच एकता की भावना को मजबूत करते हैं। मृत्यु-भोज भी एक ऐसा ही अवसर है, जहाँ लोग एकत्र होकर शोक व्यक्त करते हैं और परिवार को भावनात्मक समर्थन देते हैं। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी लोग बिना किसी औपचारिकता के केवल संवेदना प्रकट करने और साथ देने के लिए उपस्थित होते हैं। कई बार पूरा गाँव व्यवस्था में सहयोग करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस परंपरा की मूल शक्ति सामूहिकता और सामाजिक एकता में निहित है।

लेकिन अध्ययन के दौरान यह भी देखा गया कि बदलते समय के साथ सामाजिक सोच में परिवर्तन आया है। आधुनिक जीवन में उपभोक्तावाद और सामाजिक तुलना का प्रभाव बढ़ा है। लोग अक्सर दूसरों से अपनी स्थिति की तुलना करते हैं। इस संदर्भ में Pierre Bourdieu का 'प्रतीकात्मक पूंजी' का सिद्धांत समझने में मदद करता है। बुरदिये के अनुसार लोग केवल धन ही नहीं, बल्कि सम्मान, प्रतिष्ठा और सामाजिक पहचान भी अर्जित करना चाहते हैं। कई बार बड़े स्तर पर मृत्यु-भोज का आयोजन सामाजिक प्रतिष्ठा दिखाने का माध्यम बन जाता है। अधिक अतिथि, भव्य व्यवस्था और खर्चीली तैयारी को सम्मान से जोड़ दिया जाता है।

यह प्रवृत्ति विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में अधिक देखने को मिलती है, जहाँ सामाजिक दायरा बड़ा होता है और प्रतिस्पर्धा की भावना भी अधिक होती है। ऐसे में मृत्यु-भोज कभी-कभी सामाजिक प्रदर्शन का रूप ले लेता है। परिणामस्वरूप आर्थिक दबाव बढ़ सकता है। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि सीमित आय वाले परिवारों के लिए यह स्थिति कठिन हो सकती है। सामाजिक अपेक्षाओं के कारण वे अपनी क्षमता से अधिक खर्च करने को बाध्य हो सकते हैं। इससे ऋण, तनाव और मानसिक बोझ की स्थिति उत्पन्न होती है।

इस प्रकार मृत्यु-भोज की परंपरा दो पहलुओं में दिखाई देती है। एक ओर यह सामूहिक सहानुभूति और सामाजिक जुड़ाव का माध्यम है, तो दूसरी ओर यह सामाजिक तुलना और प्रतिष्ठा की होड़ का मंच भी बन सकती है। यही द्वंद्व इसके वर्तमान स्वरूप को जटिल बनाता है।

आधुनिकीकरण के संदर्भ में यह प्रश्न उठता है कि क्या परंपराओं को बदलते समय के साथ ढाला जा सकता है। आधुनिकीकरण का अर्थ यह नहीं है कि पुरानी परंपराओं को पूरी तरह समाप्त कर दिया जाए। इसका अर्थ यह है कि उन्हें वर्तमान सामाजिक मूल्यों और आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तित किया जाए। अध्ययन में कुछ ऐसे उदाहरण सामने आए जहाँ परिवारों ने मृत्यु-भोज के अवसर पर सेवा कार्यों को प्राथमिकता दी। जैसे रक्तदान शिविर का आयोजन, गरीबों को भोजन वितरण, छात्रों को सहायता देना या पर्यावरण से जुड़े कार्य करना।

ऐसे प्रयास यह दिखाते हैं कि परंपरा को एक सकारात्मक दिशा दी जा सकती है। इससे सामाजिक उपयोगिता बढ़ती है और खर्च भी नियंत्रित रहता है। परिवार को यह संतोष होता है कि उन्होंने अपने प्रियजन की स्मृति में समाज के लिए कुछ उपयोगी किया। यह दृष्टिकोण सांस्कृतिक निरंतरता और सामाजिक उत्तरदायित्व दोनों को संतुलित करता है।

पूर्व अध्ययनों में भी यह पाया गया है कि जब समुदाय सामूहिक सहमति से सादगी अपनाता है, तो सामाजिक दबाव कम हो जाता है। यदि गाँव या मोहल्ला स्तर पर यह निर्णय लिया जाए कि मृत्यु-भोज सादगी से किया जाएगा और दिखावे से बचा जाएगा, तो प्रतिस्पर्धा की भावना स्वतः कम हो सकती है। सामाजिक संगठनों और पंचायतों की भूमिका यहाँ महत्वपूर्ण हो सकती है। वे लोगों को जागरूक कर सकते हैं और संतुलित व्यवहार को प्रोत्साहित कर सकते हैं।

इन निष्कर्षों का महत्व इसलिए भी है क्योंकि यह केवल एक परंपरा का विश्लेषण नहीं है, बल्कि यह समाज में हो रहे व्यापक बदलावों की ओर संकेत करता है। आर्थिक स्थिति, शिक्षा का स्तर, शहरीकरण और आधुनिक जीवन-शैली—इन सभी का प्रभाव परंपराओं पर पड़ता है। यदि संतुलन नहीं रखा गया, तो परंपरा अपने मूल उद्देश्य से दूर जा सकती है। वहीं यदि इसे पूरी तरह समाप्त करने का प्रयास किया जाए, तो सांस्कृतिक पहचान को भी नुकसान हो सकता है।

अंत में यह कहा जा सकता है कि मृत्यु-भोज की परंपरा को समझने के लिए हमें उसके दोनों पक्षों को देखना होगा। इसमें सामाजिक एकता और भावनात्मक सहारा देने की क्षमता है, जो अत्यंत महत्वपूर्ण है। साथ ही इसमें आर्थिक दबाव और सामाजिक प्रतिस्पर्धा का जोखिम भी है। इसलिए आवश्यक है कि इसे समझदारी और संतुलन के साथ निभाया जाए।

न पूर्ण निषेध उचित है और न ही अंधानुकरण। यदि सामूहिकता, सादगी और सेवा की भावना को प्राथमिकता दी जाए, तो यह परंपरा समाज के लिए सकारात्मक भूमिका निभा सकती है। यही इस अध्ययन की चर्चा का मुख्य सार है कि परंपरा को बदलते समय के अनुसार सरल और उपयोगी बनाते हुए उसकी मूल आत्मा को सुरक्षित रखा जाए।

निष्कर्ष एवं सुझाव

अध्ययन दर्शाता है कि मृत्यु-भोज की परंपरा गतिशील है। इसका मूल उद्देश्य सामूहिकता और करुणा था। आधुनिक संदर्भ में इसे सादगी और सेवा से जोड़कर पुनर्संतुलित किया जा सकता है।

सुझाव: इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मृत्यु-भोज की परंपरा स्थिर नहीं है, बल्कि समय के साथ बदलती रही है। पहले इसका मुख्य उद्देश्य शोकग्रस्त परिवार के साथ खड़ा होना, दुख बाँटना और सामाजिक सहयोग को मजबूत करना था। लोग एक-दूसरे के घर जाकर संवेदना व्यक्त करते थे और सामूहिक रूप से भोजन की व्यवस्था में हाथ बँटाते थे। इससे परिवार को भावनात्मक सहारा मिलता था और समाज में अपनापन बना रहता था।

लेकिन आज के समय में कई जगह यह परंपरा बदलते सामाजिक माहौल से प्रभावित हुई है। कुछ स्थानों पर इसमें दिखावा और खर्च बढ़ गया है। सामाजिक अपेक्षाएँ भी बढ़ी हैं। कई परिवार अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार सरल आयोजन करना चाहते हैं, फिर भी उन्हें समाज की बातों का ध्यान रखना पड़ता है। इससे कभी-कभी आर्थिक दबाव और मानसिक तनाव की स्थिति बन जाती है।

अध्ययन यह भी बताता है कि इस परंपरा को पूरी तरह समाप्त करना आवश्यक नहीं है। बल्कि इसे उसके मूल उद्देश्य—सामूहिकता और करुणा—के साथ फिर से जोड़ा जा सकता है। यदि सादगी अपनाई जाए और अनावश्यक खर्च से बचा जाए, तो यह परंपरा सकारात्मक रूप में जारी रह सकती है।

व्यावहारिक और नीतिगत स्तर पर कुछ सुझाव सामने आते हैं। सबसे पहले, पंचायत स्तर पर सादगी का सामूहिक संकल्प लिया जा सकता है। यदि गाँव या मोहल्ले के लोग मिलकर तय करें कि मृत्यु-भोज सरल ढंग से होगा, तो सामाजिक दबाव कम हो जाएगा। इससे हर परिवार को राहत मिलेगी।

दूसरा, सेवा-आधारित मॉडल को प्रोत्साहित किया जा सकता है। जैसे रक्तदान शिविर, गरीबों को भोजन वितरण, जरूरतमंद बच्चों की मदद या पर्यावरण से जुड़े कार्य। इससे आयोजन का उद्देश्य अधिक उपयोगी और समाजोपयोगी बन सकता है।

तीसरा, धार्मिक नेताओं और सामाजिक मार्गदर्शकों की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। यदि वे सादगी और सेवा का संदेश दें, तो लोग उसे आसानी से स्वीकार करेंगे।

चौथा, सामाजिक जागरूकता अभियान चलाए जा सकते हैं। विद्यालयों, सामाजिक संगठनों और मीडिया के माध्यम से लोगों को समझाया जा सकता है कि परंपरा का मूल भाव दिखावे में नहीं, बल्कि सहानुभूति में है।

अंततः यही कहा जा सकता है कि संतुलन ही समाधान है। न तो अंधानुकरण उचित है और न ही पूर्ण निषेध। सादगी, समझदारी और सेवा की भावना के साथ मृत्यु-भोज की परंपरा को समाज के हित में आगे बढ़ाया जा सकता है।

सीमाएँ एवं भविष्य की संभावनाएँ

इस अध्ययन की कुछ सीमाएँ भी हैं, जिन्हें स्वीकार करना आवश्यक है। सबसे पहली सीमा यह है कि यह शोध मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसमें पुस्तकों, लेखों, समाचार रिपोर्टों और पहले से उपलब्ध सामग्री का उपयोग किया गया है। प्रत्यक्ष रूप से लोगों से बातचीत या विस्तृत सर्वेक्षण नहीं किया गया। इसलिए कई निष्कर्ष सामान्य प्रवृत्तियों के आधार पर प्रस्तुत किए गए हैं।

दूसरी सीमा यह है कि अलग-अलग क्षेत्रों की स्थितियों में भिन्नता हो सकती है, लेकिन इस अध्ययन में सभी क्षेत्रों का समान रूप से गहन विश्लेषण संभव नहीं हो सका। आर्थिक स्थिति, शिक्षा स्तर और स्थानीय परंपराओं के अनुसार मृत्यु-भोज का स्वरूप बदल सकता है, जिसे अधिक विस्तार से समझने की आवश्यकता है।

भविष्य में इस विषय पर क्षेत्रीय स्तर पर प्राथमिक सर्वेक्षण किए जा सकते हैं। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में लोगों से सीधे बातचीत कर तथ्य एकत्र किए जाएँ, तो अधिक स्पष्ट चित्र सामने आएगा। साथ ही, मृत्यु-भोज के मनोवैज्ञानिक प्रभावों—जैसे शोक, सामाजिक दबाव और भावनात्मक सहारे—पर भी अलग से अध्ययन किया जा सकता है। इससे इस परंपरा को और गहराई से समझने में सहायता मिलेगी।

आभार

लेखक उन सभी विद्वानों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और स्थानीय समुदाय के लोगों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता है, जिनके विचारों और अनुभवों ने इस अध्ययन को दिशा दी। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहयोग देने वाले सभी व्यक्तियों का धन्यवाद। उनके सुझाव, चर्चा और सामाजिक समझ ने इस विषय को बेहतर ढंग से समझने में सहायता की। लेखक उन सभी का कृतज्ञ है जिन्होंने किसी न किसी रूप में प्रेरणा और समर्थन प्रदान किया।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता उपयोग घोषणा

इस शोध-पत्र की भाषा सुधार और प्रारूप विन्यास में कृत्रिम बुद्धिमत्ता उपकरण का बहुत ही आंशिक रूप से उपयोग किया गया है। इसका प्रयोग केवल शब्द-संयोजन और प्रस्तुति को स्पष्ट करने तक सीमित रहा है। शोध के विचार, विश्लेषण, तर्क और निष्कर्ष पूर्णतः लेखक के स्वयं के हैं। प्रस्तुत सामग्री की सटीकता, प्रामाणिकता और अंतिम जिम्मेदारी पूरी तरह लेखक की है।

संशोधित संदर्भ सूची

अकादमिक एवं सरकारी स्रोत

- Bourdieu, P. (1986). *The forms of capital*. Greenwood Press.
- Durkheim, E. (1995). *The elementary forms of religious life*. Free Press.
- Weber, M. (1978). *Economy and Society*. University of California Press.
- National Blood Transfusion Council. (2023). *Annual Report*. Ministry of Health and Family Welfare, Government of India.
- Government of Rajasthan. (1960). *Rajasthan Death Feast Prohibition Act, 1960*.

मीडिया स्रोत

- Dainik Bhaskar. (2025). *Blood donation camp organized along with funeral feast in Rajgarh.*
- Dainik Bhaskar. (2025). *Dalit society in Gangoh decides to end funeral feast tradition.*
- ETV Bharat. (2025). *Muslim community in Ajmer decides to discontinue 40th-day funeral feast.*
- ETV Bharat. (2025). *Mahadalit village in Khagaria boycotts funeral feast.*

- Live Hindustan. (2025). *Professor promotes environmental awareness by distributing plants instead of funeral feast.*
- NDTV India. (2025). *Nagaur Jaat community limits expenditure on funeral feasts.*
- News18 Hindi. (2025). *Dharamshala initiative to discourage expensive funeral feasts.*
- Patrika. (2025). *Savings from funeral feast utilized for development of government schools.*
- Prabhat Khabar. (2025). *Blankets distributed instead of funeral feast in Khagaria.*

मीडिया लिंक

https://www.livehindustan.com/uttar-pradesh/bulandsehar/story-professor-bhishma-singh-promotes-environmental-awareness-by-distributing-plants-instead-of-death-feasts-201771245947085.html

https://www.bhaskar.com/local/mp/rajgarh/news/blood-donation-camp-along-with-death-feast-in-rajgarh-136236998.html

https://www.prabhatkhabar.com/state/bihar/khagaria/distribute-blankets-instead-of-feasting-on-death

https://ndtv.in/india/rajasthan-nagaur-jaat-community-decides-not-to-spend-extra-on-last-rites-marriage-like-functions-also-limits-on-gold-11008693

https://www.patrika.com/jaipur-news/motivation-story-37-crore-rupees-collected-from-mustard-straw-and-funeral-feast-savings-changing-the-face-of-700-government-schools-20330308

https://www.etvbharat.com/hi/state/muslim-community-in-ajmer-decided-to-ban-on-mrityu-bhoj-on-40th-day-rajasthan-news-rjs25120204473

https://www.bhaskar.com/news/raj-oth-mat-latest-eklera-news-040006-1323754-nor.html

https://www.bhaskar.com/local/uttar-pradesh/saharanpur/gangoh/news/saharanpur-dalit-society-breaks-tradition-historical-decision-funeral-feast-ban-137056448.html

https://www.etvbharat.com/hi/!state/people-boycotted-funeral-feast-in-khagaria-mahadalits-village-english-tola-bihar-news-brs25070201980

https://www.etvbharat.com/hi/!state/indore-kalu-dog-mrityu-bhoj-residents-of-colony-paid-tribute-on-terahwi-madhya-pradesh-news-mps25050403165

https://hindi.news18.com/news/madhya-pradesh/sagar-basant-baba-builds-dharamshala-to-stop-death-feast-expenses-local18-9248423.html

https://www.google.com/imgres?q=%E0%A4%AE%E0%A5%83%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A5%81-%E0%A4%AD%E0%A5%8B%E0%A4%9C%20news&imgurl=https%3A%2F%2Flookaside.fbsbx.com%2Flookaside%2Fcrawler%2Fmedia%2F%3Fmedia_id%3D1687217174796286&imgrefurl=https%3A%2F%2Fwww.facebook.com%2Fphoto.php%3Ffbid%3D1687217174796286%26set%3Da.298242972526028%26id%3D100070209826824&docid=T01ct1KKgIbA9M&tbnid=zjCvBZa7O8nNRM&vet=12ahUKEwjn6KCt0-KSAxWZ2TgGHYr_ChMQnPAOegQIHxAB..i&w=885&h=617&hcb=2&ved=2ahUKEwjn6KCt0-KSAxWZ2TgGHYr_ChMQnPAOegQIHxAB

https://www.google.com/imgres?q=%E0%A4%AE%E0%A5%83%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A5%81-%E0%A4%AD%E0%A5%8B%E0%A4%9C%20news&imgurl=https%3A%2F%2Fpbs.twimg.com%2Fmedia%2FEhnuS5KVoAEfGMF.jpg&imgrefurl=https%3A%2F%2Fx.com%2FCpTrisaran%

2Fstatus%2F1304335583418834945&docid=muu_-Tid0S3NoM&tbnid=a7E6G9LSzZxP5M&vet=12ahUKEwjn6KCt0-KSAxWZ2TgGHYr_ChMQnPAOegQIIBAB..i&w=720&h=659&hcb=2&itg=1&ved=2ahUKEwjn6KCt0-KSAxWZ2TgGHYr_ChMQnPAOegQIIBAB

https://www.google.com/imgres?q=%E0%A4%AE%E0%A5%83%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A5%81-%E0%A4%AD%E0%A5%8B%E0%A4%9C%20news&imgurl=https%3A%2F%2Fpawarmatrimonial.com%2Fwp-content%2Fuploads%2F2017%2F12%2F26000938_157514445022418_7931741869547936212_n.jpg&imgrefurl=https%3A%2F%2Fpawarmatrimonial.com%2F%25E0%25A4%25B6%25E0%25A5%258D%25E0%25A4%25B0%25E0%25A5%2580-%25E0%25A4%25B0%25E0%25A4%25AE%25E0%25A5%2587%25E0%25A4%25B6-%25E0%25A4%259A%25E0%25A5%258C%25E0%25A4%25A7%25E0%25A4%25B0%25E0%25A5%2580-%25E0%25A4%258F%25E0%25A4%25B5%25E0%25A4%2582-%25E0%25A4%25B8%25E0%25A5%2581%25E0%25A4%25B0%25E0%25A5%2587%25E0%25A4%25B6%2Findexsrc.html&docid=ySirtGTtLHkrCM&tbnid=zC5zga9jz6LebM&vet=12ahUKEwiS74XX0-KSAxXt1jgGHWpiDV84ChCc8A56BAgREAE..i&w=960&h=720&hcb=2&itg=1&ved=2ahUKEwiS74XX0-KSAxXt1jgGHWpiDV84ChCc8A56BAgREAE

श्रद्धांजलि बनी जीवनदानः तेरहवीं पर स्वैच्छिक रक्तदान की प्रेरक पहल

खतौली में पहली बार तेरहवीं पर रक्तदान, समाज ने सराहा अभिनव प्रयास

जन जागरण संदेश

खतौली। सैनी नगर निवासी स्वर्गीय सरोज बाला शर्मा पत्नी मेघपाल शर्मा की तेरहवीं के पावन अवसर पर 12 फरवरी 2026 को जी.टी. रोड स्थित आर्यन बैंक्वेट हॉल, खतौली में आयोजित स्वैच्छिक रक्तदान शिविर सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। इस अभिनव आयोजन ने परंपराओं को एक नई सामाजिक दिशा देते हुए शोक को सेवा में रूपांतरित कर दिया। क्षेत्र में पहली बार तेरहवीं जैसे संस्कार को मानव सेवा से जोड़ने की यह पहल समाज के लिए प्रेरणादायक उदाहरण बन गई। कार्यक्रम का उद्देश्य केवल श्रद्धांजलि अर्पित करना नहीं, बल्कि उसे 'मानवता के महादान' से जोड़कर सार्थक बनाना था। आयोजन ने यह संदेश दिया कि दिवंगत आत्मा को सच्ची श्रद्धांजलि वही है, जो किसी जरूरतमंद के जीवन में नई आशा का संचार करे। बड़ी संख्या में लोगों ने उत्साहपूर्वक रक्तदान कर इस संकल्प को साकार किया। इस शिविर का आयोजन एस.एल.आर.सी.एस. रूरल डेवलपमेंट फाउंडेशन एवं सर्वेशम मंगलम फाउंडेशन के संयुक्त तत्वावधान में किया गया। रक्त संग्रहण के लिए तुषार चैरिटेबल ब्लड सेंटर, चिकित्सकीय टीम उपस्थित रही, जिसने सभी आवश्यक स्वास्थ्य मानकों का पालन करते हुए सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित रूप से रक्त संग्रह किया। कार्यक्रम का संचालन एस.एल.आर.सी.एस. रूरल डेवलपमेंट फाउंडेशन के संस्थापक अध्यक्ष डॉ. अंकुर प्रकाश गुप्ता 'मानव' ने किया। अपने उद्बोधन में उन्होंने कहा, 'रक्तदान केवल एक औपचारिक सेवा नहीं, बल्कि किसी अजनबी के जीवन में उम्मीद की लौ जलाने का माध्यम है। यदि हम अपने संस्कारों को समाज सेवा से जोड़ें, तो हर अवसर परिवर्तन की शुरुआत बन सकता है।' आयोजन को सफल बनाने में संस्था की ओर से सुगंधा नारंग, सुमन सेन एवं उत्तम कुमार गुप्ता का विशेष सहयोग रहा। साथ ही राजीव शर्मा, संजीव शर्मा, चिंटू शर्मा, संजय शर्मा, मोतीराम, प्रवीण वर्मा, मानसी वर्मा, मानवी गुप्ता, श्रीनिवास शर्मा, मेघवाल शर्मा, श्याम सुंदर शर्मा, पूजा शर्मा, मुकेश, अनिल शर्मा एवं प्रवीण शर्मा सहित अनेक सहयोगियों ने सक्रिय सहभागिता निभाई। सभी के संयुक्त प्रयासों से शिविर अनुशासित, गरिमामय और प्रेरणादायक वातावरण में संपन्न हुआ। उपस्थित गणमान्य नागरिकों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं ने इस पहल को नई सोच की सशक्त शुरुआत बताया और इसकी सराहना की। उनका कहना था कि जब संस्कारों के साथ सेवा की भावना जुड़ती है, तब समाज में सकारात्मक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त होता है। यह स्वैच्छिक रक्तदान शिविर केवल एक आयोजन नहीं, बल्कि एक संदेश है–कि शोक को भी सेवा में बदला जा सकता है और श्रद्धांजलि को जीवनदान का माध्यम बनाया जा

खतौली में "मानवता के महादान" के रूप में रक्तदान शिविर आयोजित

खतौली(एसपी) प्राप्त समाचार के अनुसार नगर के सैनी नगर क्षेत्र में एक अनूठी और प्रेरक पहल देखने को मिली, जब स्वर्गीय सरोज बाला

शर्मा (पत्नी मेघपाल शर्मा) की तेरहवीं के अवसर पर पारंपरिक कार्यक्रम के साथ स्वैच्छिक रक्तदान शिविर का आयोजन किया गया। जी.टी. रोड स्थित आर्यन बैंक्वेट हश्वल में संपन्न इस आयोजन ने शोक की घड़ी को सेवा और सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ते हुए एक नई दिशा प्रदान की। क्षेत्र में पहली बार तेरहवीं जैसे संस्कार को रक्तदान अभियान से जोड़ा गया, जिसकी नगरवासियों और सामाजिक संगठनों ने खुलकर सराहना की। परिवार का मानना था कि श्रद्धांजलि केवल औपचारिकता तक सीमित न रहे, बल्कि समाज के लिए उपयोगी कार्य के रूप में सामने आए। इसी भावना के साथ "मानवता के महादान" के रूप में रक्तदान शिविर आयोजित किया गया। बड़ी संख्या में युवाओं, महिलाओं और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने स्वेच्छा से रक्तदान कर दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित की। आयोजन स्थल पर श्रद्धा, संवेदना और सेवा का समन्वित वातावरण देखने को मिला। इस शिविर का आयोजन एस. एल.आर.सी.एस. रूरल डेवलपमेंट फाउंडेशन और सर्वेशम मंगलम फाउंडेशन के संयुक्त तत्वावधान में किया गया। रक्त संग्रहण के लिए तुषार चौरिटेबल ब्लड सेंटर, मुजफ्फरनगर की अनुभवी चिकित्सकीय टीम उपस्थित रही। सभी रक्तदाताओं की स्वास्थ्य जांच के बाद निर्धारित मानकों के अनुरूप सुरक्षित तरीके से रक्त एकत्र किया गया। चिकित्सा दल ने स्वच्छता, सुरक्षा और पारदर्शिता का विशेष ध्यान रखा, जिससे दाताओं में विश्वास और उत्साह बना रहा। कार्यक्रम का संचालन फाउंडेशन के संस्थापक अध्यक्ष डा. अंकुर प्रकाश गुप्ता "मानव" ने किया। उन्होंने अपने संबोधन में कहा कि रक्तदान केवल सेवा का कार्य नहीं, बल्कि किसी अनजान व्यक्ति को जीवन देने का अवसर है। उन्होंने कहा कि यदि समाज अपने संस्कारों को सेवा से जोड़ ले, तो हर पारिवारिक अवसर सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बन सकता है। उनके विचारों ने उपस्थित लोगों को गहराई से प्रभावित किया और आयोजन को व्यापक सामाजिक संदर्भ प्रदान किया। आयोजन की सफलता में संस्था की ओर से सुगंधा नारंग, सुमन सेन और उत्तम कुमार गुप्ता का विशेष योगदान रहा। इसके अतिरिक्त राजीव शर्मा, संजीव शर्मा,

चिंटू शर्मा, संजय शर्मा, मोतीराम, प्रवीण शर्मा, रजनीश वर्मा, नकुल गुप्ता, राजीव वर्मा, मानसी वर्मा, मानवी गुप्ता, श्रीनिवास शर्मा, मेघवाल शर्मा, श्याम सुंदर शर्मा, पूजा शर्मा, मुकेश, अनिल शर्मा और प्रवीण शर्मा सहित अनेक सहयोगियों ने सक्रिय सहभागिता निभाई। सामूहिक प्रयासों से शिविर सुव्यवस्थित और गरिमामय वातावरण में संपन्न हुआ। नगर के गणमान्य नागरिकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने इसे नई सोच की सशक्त शुरुआत बताया। उनका कहना था कि समाज में अक्सर तेरहवीं जैसे अवसर केवल पारंपरिक रीति-रिवाजों तक सीमित रह जाते हैं, लेकिन इस पहल ने दिखाया कि परंपरा और सेवा का संतुलन संभव है। जब शोक के अवसर को भी मानवता की सेवा से जोड़ा जाता है, तब वह समाज के लिए प्रेरणा बन जाता है। खतौली की यह पहल न केवल एक सफल रक्तदान शिविर के रूप में याद की जाएगी, बल्कि एक ऐसे उदाहरण के रूप में भी देखी जाएगी, जिसने यह सिद्ध किया कि श्रद्धांजलि को कर्म से जोड़ा जाए तो वह वास्तविक अर्थों में जीवनदान बन सकती है। यह प्रयास आने वाले समय में अन्य परिवारों और संस्थाओं को भी प्रेरित कर सकता है कि वे सामाजिक अवसरों को सेवा और जनकल्याण से जोड़कर समाज में सकारात्मक परिवर्तन की दिशा को मजबूत करें।